एकान्त श्रीवास्तव की आँचलिक काव्य संवेदना

एकांत श्रीवास्तव अंतिम दशक की नवीनतम पीढ़ी के अन्यतम लोकधर्मी कवि हैं। उनमें अपने घर-परिवार, नदी-पेड़, खेत-खलिहान के प्रति यथार्थपरक भावुक लगाव है। 'पोखर के जल में/एक साँवली साँझ की तरह/काँपती है/घर की याद' जैसी पंक्तियाँ उनके अंतर्मन में इस तरह पैठ गई है कि प्रवास के दौरान भी उन्हें घर का दुःख सालता रहता है। पहले काव्यसंग्रह में कवि के अनुभव संसार की संवेदनाएँ पास-पड़ोस की हैं। वर्तमान समस्याओं से जैसे वे कतरा कर चलते हों। दूसरे काव्यसंग्रह में कवि की घर-परिवार के प्रति मार्मिक संवेदना उस लड़की की भाँति व्यक्त हुई है जो कि काफी लाड-प्यार के बाद मायके से ससुराल गई हो। "परदेश में/एक स्त्री आती है/पीतल के लोटे में उबला पानी लिये/पूछती हुई कि कैसा जी है अब/माँ की आँखों-सी लगती हैं/उसकी आँखों की बेचैन गहराइयाँ/एक लड़की आती है दौड़ती/और चौखट से सटकर पूछती है - दूध लाऊँ ?/उसे देखकर/छोटी बहन की चुलबुली उदासी याद आती है।"[1]

मूलतः कहानी लेखन से रचनापथ की शुरुआत करते हुए एकान्त श्रीवास्तव ने दादी-माँ की प्रेरणा एवं चाचा रवि श्रीवास्तव की कविताओं से प्रभावित होकर कविता की भूमि को चुना। ग्रामीण बरसाती परिवेश से "हिलोरें ले रहा है सागर/मेरी बातें जानकर" की तुकबंदी से उनके भीतर कविता का स्वर फूट पड़ा। कालान्तर में वे अपने काव्यगुरु अनासक्त के कहने पर मुक्त छंद की कविता लिखने लगे। छत्तीसगढ़ (प्राचीन महाकौशल) राज्य के रायपुर जिले के छुरा कस्बे में १९६४ में पैदा हुए एकांत श्रीवास्तव ने हिंदी में एम.ए. तथा पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के अन्तर्गत हिन्दी शिक्षण योजना, विशाखापट्टनम से कार्यक्षेत्र की शुरुआत की। सम्प्रति भारतीय भाषा परिषद् कोलकाता से जुड़े रहकर आपने कुछ समय तक मासिक पत्रिका 'वागर्थ' का सफल संपादन भी किया।

अभी तक एकांत श्रीवास्तव के 'अन्न हैं मेरे शब्द' (१९९४), 'मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद' (२०००), 'बीज से फूल तक' (२००३) नामक तीन काव्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। हिन्दी काव्यजगत् में आपकी रचनाओं का स्वागत हुआ। फलस्वरूप एकांत श्रीवास्तव को शरद बिल्लौरे स्मृति कविता पुरस्कार (१९९१), रामविलास शर्मा पुरस्कार (ऋतुगंध सम्मान - १९९१), 'ठाकुर प्रसाद स्मृति पुरस्कार' (१९९४), मध्यप्रदेश का साहित्य अकादमी का दुष्यंत कुमार पुरस्कार (१९९४), केदार सम्मान (१९९७), डॉ. नरेन्द्रदेव वर्मा सम्मान (२००३) आदि पुरस्कारों से सम्मानित किया गया।

कवि, आलोचक और सम्पादक विजय बहादुर सिंह ने कवि के प्रथम काव्यसंग्रह 'अन्न हैं मेरे शब्द' के कवर पृष्ठ पर लिखा है - "छत्तीसगढ़ अंचल के एक छोटे-से गाँव में रहकर लिखी गयी ये कविताएँ अपने पहले ही पाठ में हिंदी कविता के पाठकों को उस ठेठ देसी संसार में ले जाती है जो आज भी अपनी बुनियादी रागमयता और इंसानियत के लिए संघर्षशील हैं।"[2] यह कथन इस मायने में सही है कि आधुनिक सूचना तकनीक, मीडिया, बाजारवाद, मूल्यहीनता आदि के बार-बार खरोंचों से भी गाँवों में मानवीय संवेदनाएँ बची हुई हैं। एकांत श्रीवास्तव अपनी कविताओं में इन्हीं बची हुई मानवीय संवेदनाओं को गाँव के खेत-खलिहानों और प्रकृति के नाना रूपों के माध्यम से व्यक्त करते हैं।

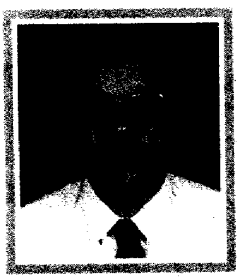

प्रो. रवीन्द्रनाथ मिश्र

जन्म
१२ जुलाई, १९५७
शिक्षा
एम.ए., बी.एड., पीएच.डी.
साहित्य
६ कृतियाँ प्रकाशित। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित।
सम्पर्क
म.नं.१२९/१-एच/१, २२, आजाद को-ऑपरेटिव हाउसिंग सोसायटी, कुरका, गोवा - ४०३१०९
मो. ०९४०३२७२३०५

प्रस्तुत संग्रह की कविताएँ 'धान-गंध' : पूर्व खण्ड और 'नागरिक-व्यथा' : उत्तर खण्ड के अंतर्गत विभाजित हैं। प्रथम खंड की अधिकांश कविताएँ लोक जीवन की मिट्टी की गंध और घर-परिवार की संवेदनाओं से जुड़ी हैं। शरीर माध्यम खलु धर्म साधनम यानी जीवन के सारे धर्म शरीर के लिए हैं। कला, साहित्य, संगीत की उपज मनुष्य जीवन से ही होती है। वाणी का संबंध अन्न से जुड़ा है। कवि की 'सूर्य' कविता प्रकृति, जीवन की खुशहाली एवं प्रातःकाल का अद्‌भुत चित्र प्रस्तुत करती है। "वह चमकेगा/धरती के माथ पर/अखण्ड सुहाग की/टिकुली बनकर/वह/पेड़ और चिड़ियों के दुर्गम अँधेरे में/सुबह की पहली खुशबू/और हमारे खून की ऊष्मा बनकर/उग रहा है/उधर/आहिस्ता-आहिस्ता।"[३] यहाँ मैथिलीशरण गुप्त की "सखि, नीलनभस्सर में उतरा/यह हँस अहा ! तरता तरता।"[४] पंक्तियाँ जीवन्त हो उठती हैं।

इस दौर के अष्टभुजा शुक्ल, बोधिसत्व, निलय उपाध्याय आदि कवियों की तरह एकांत श्रीवास्तव ने भी ग्राम्य जीवन की जिन्दगी को गहरी संवेदना और रागमयता के साथ भोगा और जीया है। यही कारण है कि इनकी 'अच्छे दिन', 'लौटती बैलगाड़ी का गीत', 'सूखा', 'कार्तिक पूर्णिमा', 'सिला बीनती लड़कियाँ', 'बसन्त' आदि कविताओं में प्रकृति, जीवन और लोकसंस्कृति की विभिन्न छवियाँ और संवेदनाएँ घुल मिल गई हैं।

हिल रही है/अलगनी में टँगी हुई कन्दीलें/
और चमक रहा है गाँव का कन्धा/
एक माँ के कण्ठ से उठ रही है लोरी/
कि चाँदी के कटोरे में भरा है दूध और घुल रहा है बताशा/
बैलगाड़ी पहुँच जाना चाहती है गाँव
दूध में बताशे घुलने से पहले।[५]

'सूखा' कविता की पृष्ठभूमि के संबंध में कवि ने स्वयं लिखा है - "एक बार वर्षा नहीं हुई। फसल चौपट। सूखे की स्थिति। गाँव में अकाल पड़ गया। मेला उस वर्ष भी लगा मगर फीका-फीका-सा। उजाड़-सा/लोग बहुत कम आए। जेबें ही खाली थीं। उस बार का मेला घूमना भुलाया नहीं जा सकता। उस अनुभव ने मुझे बहुत आहत किया। बहुत बाद में वह अनुभव मेरी कविता में आया। 'इस तरह मेला घूमना/हुआ इस बार/न बच्चे के लिए मिठाई/न घरवाली के लिए टिकुली-चूड़ी/न नाच न सर्कस/इस बार जेबों में/सिर्फ हाथ रहे/उसका खालीपन भरते।"[६]

कवि की अन्य कविताओं में कार्तिक पूर्णिमा के दिन नदी में टिमटिमाते दीपों की टेढ़ी-मेढ़ी पाँतें, धान की कटाई के बाद रंगीन चिड़ियों की भाँति धान के खेतों में सिला बीनतीं और कार्तिक में स्नान करती हुई लड़कियाँ, बसंत का हर्षोल्लास, किसान और जमीन की एक-दूसरे के प्रति छिपी हुई सुखद एवं दुखद स्मृतियों आदि के विभिन्न रंग मौजूद हैं। "जमीन/बिक जाने के बाद भी/पिता के सपनों में/बिछी रही रात भर/वह जानना चाहती थी/हल के फाल का स्वाद/चीन्हना चाहती थी/धँवरे बैलों की खुर/वह चाहती थी/कि उसके सीने में लहलहाये/पिता की बोयी फसलें/एक अटूट रिश्ते की तरह/कभी नहीं टूटना चाहती थी जमीन/बिक जाने के बाद भी।"[७]

अन्न-१, अन्न-२, धान-गंध-१ और धान-गंध-२ कविताएँ जीवन और मौसम में खुशहाली एवं वसन्तमय वातावरण उत्पन्न करती हैं। सदियों से धरती अपनी विपुल सम्पदा मानव जाति के लिए अर्पित करती आ रही है। आगे की 'फूल' कविता फूल, फल, बचपन और जवानी के समीकरण को समझाती है। फूल वही अच्छा होता है जो फलों में बदलकर हमारी भूख को शांत करता है। मनुष्य का बचपन फूल की तरह होता है जो कि जीवन के थपेड़ों से संघर्ष करते हुए फल की भाँति परिपक्व बनता है। 'घर' कविता में कवि के पारिवारिक जीवन की संवेदना कूट-कूट कर भरी हुई है। "यह घर/क्या इतनी आसानी से गिर जायेगा/जिसमें भरी है/मेरे बचपन की चौकड़ी/दीवारों में है आज भी/पुराने दिनों की खुशबू..... हर दुःख हर सुख में/जो रहा हरदम हमारे साथ/क्या इतनी आसानी से गिर जायेगा/ओ घर/मैं तुझे गिरने नहीं दूँगा।"[८]

धान-खण्ड की 'सूर्य' से 'नदी' तक की चौबीस कविताएँ प्रकृति, जीवन और समाज की विभिन्न संवेदनाओं को व्यक्त करती हैं। 'घर' से 'अन्तर्देशीय' तक की बारह कविताएँ पारिवारिक संवेदना को केन्द्र में रखकर लिखी गई हैं। जिनमें माँ, पिता, बहन की स्मृतियों और संवेदनाओं के मार्मिक दृश्य हैं। माँ के दिल में बसी है, सबसे सुन्दर दिनों की स्मृतियों की खुशबू और बुरे दिनों का अनन्त नीलापन और माँ की चूड़ियों में परदेश गए पिता की स्मृतियों की खनक। माँ नदी है, जो जीवन के कछारों को उर्वर बनाती है। वह धान की एक बाली के समान है जो धूप, पानी और हवा में पकाती है दूध-सा कच्चा हमारा जीवन। माँ सम्पूर्ण धरती है जो कि हमारी साँसों की धुरी पर घूमती है, जहाँ से कि सबसे पहले फूटते हैं हमारे जीवन के अंकुर।

माँ सहती है सब कुछ पर कहती कुछ भी नहीं।

अब खाट से उठेंगे माँ के दुःख/और लम्बे-लम्बे डग भरकर
कहीं गायब हो जायेंगे/और जो बचेंगी छोटी-मोटी तकलीफें
उन्हें बेड़ियों की तरह/वह टाँग देगी घर की खपरैल पर।[६]

परमानंद श्रीवास्तव ने लिखा है - "एकांत श्रीवास्तव ने मानवीय रागात्मकता की कुल पूँजी को लगभग निचोड़ लिया है। कोमल मानवीय रागात्मकता के ज्ञात स्रोतों का अत्यन्त मार्मिक इस्तेमाल है - एकांत के यहाँ।"[७]

नागरिक-व्यथा : उत्तर खण्ड की कविताएँ कवि की परिवर्तित काव्य-दृष्टि की सूचक हैं। इस खण्ड की 'दंगे के बाद', 'बोलना', 'पीठ', 'एक बेरोजगार प्रेमी का आत्मालाप' आदि कविताएँ देश की ज्वलंत समस्याओं से टकराती हैं, फिर भी कवि विचार, भाव, संवेदना और भाषा के स्तर पर लोक से जुड़ा हुआ है। दंगे के बाद की स्थिति का बयान इस बात का द्योतक है - "एक सूखा हुआ आँसू/एक उड़ा हुआ रंग/एक रौंदा हुआ जंगल है यह शहर/दंगे के बाद/आग और धुएँ के बीच/क्या सिर्फ जलेगा यह शहर/और राख में बदल जायेगा ?/या धीरे-धीरे पकेगा/कुम्हार के चाक पर रचे/घड़े की तरह।"[८] 'पीठ' कविता जहाँ अन्याय, अत्याचार और अमानवीयता को सहने का बयान करती है, वहीं 'एक बेरोजगार प्रेमी का आत्मालाप' अभाव, गरीबी, बेरोजगारी, व्यवस्था, पारिवारिक प्रेम, प्रेमिका के प्रति प्रेम आदि की संश्लिष्ट संवेदना को व्यक्त करती हैं।

कवि की कतिपय रचनाओं में समसामयिक राजनीतिक एवं सामाजिक समस्याओं की झलक मात्र है। उनकी मूल संवेदना ग्राम्य और लोकजीवन से जुड़ी हुई है। 'रंग : छह कविताएँ' के अन्तर्गत लाल, नीला, पीला, सफेद, काला, हरा रंग के माध्यम से प्रकृति और जीवन के नाना रंगों का चित्र कवि ने बड़ी बखूबी से खींचा है। 'नये साल का गीत', 'ओ पृथ्वी-१', 'ओ पृथ्वी-२', 'पुकार', 'मैं', 'सूरजमुखी के फूल' आदि कविताओं में धरती की सोंधी-सोंधी गंध और उसकी अपार संपदा तथा उससे जुड़ी मनुष्य की मानवीयता और संवेदना का स्वरूप निखर उठा है। नंदकिशोर नवल ने लिखा है - "उनका (एकांत श्रीवास्तव) जीवन-प्रेम और मानव-प्रेम, जो उनकी कविताओं से इंद्रधनुष के रंगों की तरह छनकर व्यक्त होता है, नई कवि-पीढ़ी के लिए एक सम्पत्ति है।"[९]

'पतझड़-१-२' में कवि पतझड़ के माध्यम से मानव जीवन की व्यवस्था प्रस्तुत करता है। जिसमें उसके जीवन से जुड़े गृहस्थ, वानप्रस्थ, स्मृति, मृत्यु, प्यार, स्वप्न, अदम्य आकांक्षा, मन आदि की स्थितियों और मनोभावनाओं का सुन्दर चित्रण हुआ है। 'शब्द-१,२,३' में ब्रह्म की भाँति शब्द की महत्ता एवं व्यापकता को मानवीय क्रिया-कलापों, विचारों, भावों, प्रकृति एवं लोकसंस्कृति के नाना रूपों से जोड़कर नई अर्थवत्ता प्रदान की गई है। शब्द किस प्रकार अपनी आभा, धार, कोमलता, पुरुषता, सहिष्णुता आदि का नाना रूप धारण करते हुए हमारी रक्षा करते हैं और साथ ही विनाश का कारण भी बनते हैं। वे अपनी मिठास से संबंधों को मधुर-प्रगाढ़ और तिक्तता से पुरुष-कठोर बनाते हैं। इतना ही नहीं शब्द अन्न की भूमिका अदा कर हमें जीवनदायिनी शक्ति प्रदान करते हैं।

शब्द पुराने तारों की तरह/बचाकर रखते हैं/अपनी ज्योति
पुराने फलों की तरह/बचाकर रखते हैं अपनी मिठास
अन्न हैं मेरे शब्द/पृथ्वी की उर्वरता के आदिम साक्ष्य
जन्म लेना चाहते हैं बार-बार/संसार को बचाये रखने की
पहली और आखिरी इच्छा बनकर।[१३]

'अन्न हैं मेरे शब्द' की कविताओं में अपने समय की समसामयिक समस्याओं, घटनाओं का ताप नहीं है। ये प्रकृति, घर-परिवार, ग्राम्य जीवन परिवेश से जुड़ी हुई संवेदनाओं को व्यक्त करती हैं, जिनमें लोकजीवन की रागमयता और उसके भीतर मानवीय जिजीविषा के विविध रूप मिलते हैं। कवि की भाषा बिंबों और प्रतीकों से बोझिल नहीं है। लोकजीवन के बोलचाल शब्दों के प्रयोग के कारण अर्थबोध की समस्या नहीं आती है। एकांत श्रीवास्तव की कविताओं को पढ़ते हुए हम गाँव-घर और खेत-खलिहानों की यात्रा कर लेते हैं।

एकांत श्रीवास्तव के दूसरे काव्य-संग्रह 'मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद' की रचनाओं में अपनी मिट्टी के प्रति प्रवासी कवि की पीड़ा, स्मृतियाँ एवं अनुभूतियाँ विलक्षण ताजगी और मोहकता के साथ व्यक्त हुई है। उनमें अपनी धरती की ओर लौट जाने की कसक जितनी इस संग्रह में है उतनी 'अन्न हैं मेरे शब्द' में नहीं है। वस्तुतः आज के बाजारवाद और मरती हुई संवेदनाओं के युग में कवि की अपने परिवार और गाँव के प्रति इस कसक और तड़प को यथार्थ सोच तो नहीं ही कहा जा सकता। पोखर के जल में साँवली साँझ की याद से आज पेट नहीं भर सकता। उसके लिए अपनी जड़ों से कटना हमारी मजबूरी हो गई है।

प्रस्तुत काव्यसंग्रह में कवि सामाजिक सरोकारों के प्रति

जाग्रत हुआ है। 'जन्मदिन', 'तीन नदियाँ', 'बाहर जब सन्नाटा है', 'निर्वासन', 'बाहर की आबोहवा में', 'शब्दों में नहीं', 'अपराध', 'प्यार का गीत', 'कुटुम्ब' आदि कविताएँ लोकसंस्कृति से जुड़ी होकर भी वर्तमान साम्प्रदायिक हिंसा, दंगा-फसाद, आतंकवाद से उपजी अमानवीय पीड़ा को व्यक्त करती हैं। "अरे देखो ! शताब्दी के जलते हुए मानचित्र/बह रही हैं तीन नदियाँ/एक नदी की तरह/दंगाइयों ! यह कितना सुखद है/कि तुम इन्हें चाकू से काटकर अलग नहीं कर सकते।"[१४] यही है हमारी संस्कृति की पहचान जिसे चाकू, तलवार, बन्दूक, बम, बारूद आदि से नहीं मिटाया जा सकता।

प्रकृति, परिवार और लोकसंस्कृति के पारस्परिक संबंधों की कविताओं में जहाँ कवि निसर्ग के सौन्दर्य के प्रति अभिभूत है तो वहीं पर परिवार और लोक के मोह के प्रति छटपटाहट। इसके बीच कवि सूखती हुई मानवीय संवेदनाओं के प्रति चिन्तित भी। "मूसलाधार बरसता है पानी/सजल हो जाते हैं खेत/तृप्त हो जाती हैं पुरखों की आत्माएँ/टूटने से बच जाता है मन का मेरुदण्ड/कहती हैं मंगतिन/इसी चिड़िया की आवाज से/आते हैं मेघ/सुदूर समुद्रों से उठकर/ओ चिड़िया/तुम बोलो बारम्बार गाँव में/घर में, घाट में, वन में/पत्थर हो चुके आदमी के मन में।"[१५]

एकांत श्रीवास्तव के प्रकृति-चित्रण, सुख-दुख और मानव प्रेम की कविताओं में पंत की छाया प्रतिबिम्बित होने लगती है। 'आषाढ़', 'नदी के करीब है मेरा घर', 'शरद का गीत', 'होली का गीत', 'धरती के दुःख-सुख में' आदि कविताएँ द्रष्टव्य हैं। "जंगल में पेड़/पेड़ में बीज/बीज में जन्म देने की इच्छा धरती की/शामिल है/हरे में शामिल है चुप-चुप दो रंग/पत्तों की ताजगी में शामिल है मेघ/मेघों में जल समुद्र का/शामिल है/मेरे पसीने में तुम्हारी देह का नमक/तुम्हारे लहू में मेरे लहू का रंग/मेरी नींद में तुम्हारे स्वप्न की कौंध/शामिल है।"[१६]

अंतिम दशक तक समय और समाज एक नई करवट ले रहा था और इसके पूर्व विभिन्न काव्यान्दोलनों में कवियों की नई-पुरानी पीढ़ियाँ काव्य-लेखन में सक्रिय थीं, फिर भी एकांत श्रीवास्तव मुक्तिबोध, नागार्जुन, धूमिल आदि जैसे कवियों से अधिक प्रभावित न होकर छायावादी सौन्दर्य की तर्ज पर कविताएँ लिख रहे थे। लोकजीवन और उसके साथ आधुनिकता के दबाव में उनका लोक अधिक निखरा हुआ है। आधुनिकता की झलक मात्र है। इस संबंध में काव्य आलोचक जयप्रकाश ने लिखा है - "अंतर्जीवन में बसे लोक और बहिर्जीवन में रमे आधुनिक के बीच वे द्वैत नागरिकता का शिकार हो जाते हैं। लोकजीवन से बेदखल होने की पीड़ा एकांत की नहीं, उनके अन्य समधर्मा कवियों की काव्य-संवेदना में पैठ गई है, बल्कि कहीं-कहीं तो वह मनोग्रंथि का रूप ले लेती है। लोकजीवन के छोटे-से स्मृति-विह्वल क्षण को जी लेने की व्याकुलता के आगे यह कवि-संवेदना बेबस है - "मैं बेताब हूँ सुनने के लिए/भोर के धुंधलके में/बंद कमल के पक्क से खुलने की आवाज।"[१७]

कवि की "तुम्हारी क्यारी के गुलाब की तरह नहीं/उगूँगा तो काली मिट्टी में कपास की तरह" १८ जैसी पंक्तियों में प्रतीकात्मक रूप से निराला के कुकुरमुत्ता और गुलाब की ध्वनि मिलती है। इसी तरह 'सरोज-स्मृति' से मिलती-जुलती 'पिता के लिए कुछ शोकगीत' और 'जिनके पिता नहीं होते' जैसी कविताओं में कवि की पिता के प्रति मार्मिक संवेदना व्यक्त हुई है।

गीला सफेद कपड़ा लपेट कर
जिसे हम सौंप आए हैं अग्नि को
इतनी जल्दी नहीं जाएगा वह
गड़ी रहेगी महीनों तक उसकी याद
पाँव में बबूल के काँटे की तरह
और धीरे-धीरे बहता रहेगा दुःख।[१९]

प्रस्तुत संग्रह की अधिकांश कविताओं को पढ़ने से लगता है कि कवि शहरी संस्कृति की तड़क-भड़क से ऊब कर अपने प्रदेश की काली मिट्टी में कपास की तरह शीत-गर्मी, सुख-दुख, भूख-प्यास सहकर गले में गमछा डालकर खेत की मेढ़ों और बाग-बगीचों में मस्त होकर घूमना चाहता है। वरिष्ठ कवि केदारनाथ सिंह ने पुस्तक के कवर पृष्ठ पर लिखा है - "काली मिट्टी से कपास की तरह उगने की आकांक्षा से उद्वेलित यह कवि अपनी हर अगली कविता में मानो पाठक को आश्वस्त करता है कि वह अपने भाव-लोक में चाहे जितनी भी दूर चला जाए, अंततः लौटकर वहीं आएगा जो उसके अनुभव की तपी हुई काली मिट्टी है।" एकांत श्रीवास्तव अपनी मिट्टी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए लिखते हैं - "इस मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद/जिसमें बँधी रहीं मेरी जड़ें/और मैं वृक्ष रहा छतनार/.... उस अग्नि को करूँगा याद/दुनिया के ठण्डे चूल्हे में/जिसने मुझे सिखाया सुलगना।"[२०]

कवि गाँव के गली-कूचों, बाग-बगीचों, खेत-खलिहानों से गुजरते हुए जब 'दातुन बेचने वाले बच्चे', 'पसहर झाड़ने वाली स्त्रियाँ', के पास पहुँचता है तो उसकी प्रगतिशील दृष्टि निखर

उठती है। 'ब्याह का हर गहना साहूकारों के पास गिरवी रखकर/ वे आती हैं बस सुहाग की चूड़ियाँ पहनें/जो उन्हीं की तरह होती हैं चुप और उदास/कभी-कभी 'हाँ-हूँ' करती हुई।"[२१] अन्यथा एकांत श्रीवास्तव सुन्दर, सुहावने, अपनी व्यथा में प्रसन्न सुघड़ गँवई स्वर्गोपम लोक में मस्त हैं।

"यह सौंदर्य-दीप्त 'लोक' है, प्रसन्न किन्तु कभी-कभी मीठी उदासी में डूबा हुआ; कभी चैत की सुलगती दुपहरी में निढ़ाल पड़ा हुआ या आषाढ़ की आर्द्रता और हरियाली में उमगता हुआ। यहाँ सजल खेत है, पुरखों की तृप्त आत्माएँ हैं, एक प्रसन्न वृक्ष पर कठफोड़वा की ठुकठुक है, सुदूर पहाड़ों पर पंडुक की आवाज है, मेघों की गर्जन और पछुआ के संदेश हैं, कल-कल बहती हुई नदी की पुकार है, वसंत में पत्तों का आपसी संलाप है, एक पके फल के गिरने की आवाज है, सुहागिनों का गीत है, विदा होती हुई लड़कियों की सिसकियाँ हैं, ढेकी की आवाज और चावल में बदलते धान का उल्लास है।"[२२]

कवि के तीसरे काव्यसंग्रह 'बीज से फूल तक' (२००३) की कविताएँ भी उनकी भूचेतना, लोकचेतना एवं परिवार संवेदना की परिपक्वता को दर्शाती हैं। इसमें यथावसर समय और समाज की लपटें भी हैं। यहाँ भी उन्होंने अपनी लोक माटी की खुशबू को उसी ताजगी के साथ बरकरार बनाए रखा है। "धरती अपनी धुरी पर घुमती है, ऋतुएँ आती हैं और वृक्ष नए पत्तों से लद जाते हैं, आग जलती है, एक बटुली में अन्न पकता है, अँधेरे आकाश में नक्षत्र झिलमिलाते हैं, और अँधेरी ड्योढ़ी में दिया टिमटिमाता है। यह प्रकृति और पृथ्वी के होने का विश्वास है, मनुष्य और जीवन के होने का भी। कविता मनुष्य-समाज के विवेक, उसकी नैतिकता और संवेदनशीलता के होने का विश्वास है।" (संग्रह के पूर्वकथन में कवि का वक्तव्य)

प्रस्तुत संग्रह की 'पत्तों के हिलने की आवाज : पूर्व खण्ड की कविताओं में धरती, काँस के फूल, आँसू, बाजार, बारिश, ठण्डा पानी, आग, अंधी लड़की, खाली घर, अपाहिज, बधिर, उमा, पिता, गुरुत्वाकर्षण, समुद्र तट, भोर, दोपहर, चाँद अक्षय वट, भादों की रात, वसंत आदि प्रकृति और जीवन के रंग से जुड़े शब्द एकांत श्रीवास्तव के वक्तव्य के साक्षी हैं। 'जो कुरुक्षेत्र पार करते हैं', 'आपबीती', 'डर', 'मृत्युदण्ड', 'दुर्घटना', 'विस्थापन', 'सगुन', 'हम धरती कहते हैं' आदि कविताओं में कवि ने कविता, माँ, जीवन, हिंसा और धरती का संश्लिष्ट रूप व्यक्त किया है।

हम धरती कहते हैं/तो वह माँ है/हम माँ कहते हैं
तो वह धरती/किसका है यह खून/जो बह रहा है धरती पर ?
यह उगते हुए सूर्य का खून है/
यह आसमान के हृदय से टपक रहा है
यह शब्द का खून है/सफेद कागज पर लकीर बनाता
मंदिरों से भागते घायल ईश्वर का खून है यह/
प्रार्थना में बुदबुदाता है हर फूल
अपनी टहनी पर/शांति..शांति../यह खून जो बह रहा है
उस माँ का है जिसके हम बेटे हैं/
जिसे हम धरती कहते हैं।"[२३]

कवि पृथ्वी, आग, पानी, आकाश और हवा से मनुष्य का साहचर्य जोड़ते हुए समसामयिक समस्याओं की ओर इंगित करता है। "मनुष्य इस धरती पर/सबसे शक्तिशाली आग है/हवा का रुख देखो/और उसे मत छुओ।"[२४] एकांत श्रीवास्तव का लगाव अपनी मिट्टी और जन के प्रति है। वे फूल बेचने वाली बुढ़िया के प्रति चिन्तित हैं कि पता नहीं कितने काँटों की चुभन को सहकर वह फूल बेचती है। 'मैं हर्ष मनाऊँ या विषाद्, मेरे आँसू अब सूख चुके हैं' जैसी काव्य पंक्तियों से बाजारवाद के प्रभाव के कारण गिरते हुए मूल्यों और मरती हुई संवेदनाओं के प्रति कवि की चिंता जाहिर होती है।

एकांत श्रीवास्तव की कविताएँ किसी एक विचारधारा या भाव बोध पर आधारित न होकर उनकी स्मृतियों, अनुभवों, घटनाओं, प्रकृति के विभिन्न दृश्यों, पारिवारिक संवेदनाओं आदि से जुड़ी हैं। वैसे कवि को पारिवारिक संवेदनाओं का कवि कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनकी रचनाओं में घुम-फिरकर परिवार जरूर आ जाता है। प्रस्तुत संग्रह के 'निर्जन में फूल : मध्य खण्ड' की १३ कविताएँ कवि द्वारा भाई की मृत्यु पर लिखी गई हैं। हिन्दी काव्य जगत् में भाई की स्मृति पर सम्भवतः ऐसा शोक गीत नहीं लिखा गया है। एकान्त श्रीवास्तव की सुखात्मक और दुःखात्मक संवेदना फूल और काँटों के रूप में व्यक्त हुई है। कवि ने जहाँ भाई और परिवार के साथ बीते हुए लम्हों की सुखद स्मृतियों, पारस्परिक मनोविनोद, तीज-त्यौहारों के हर्षोल्लास को व्यक्त किया है वहीं पर भाई की क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा में विलीन होते हुए शरीर का कारुणिक चित्र भी खींचा है। "एक धुंध के पार/उभरता है/भाई का चेहरा/हवा में, अग्नि में, जल में/धरती में, आकाश में/शामिल होता हुआ भाई/देखता होगा आखिरी बार मुझे पलटकर/अनंत की चौखट

के भीतर जाने से पहले/ओ भाई मेरे/मैं यहीं से करता हूँ विदा/ यहीं से हिलाता हूँ हाथ।"[२४]

'अभी वह हँस रहा है', 'आँखों पर हाथ धरे', 'मृत्यु वाला घर', 'भाई की तस्वीर', 'पाँचवें की याद' आदि कविताएँ एक भाई की भाई के प्रति अगाध प्रेम को दर्शाती हैं। वर्तमान सामाजिक परिदृश्य के बदलाव के कारण संयुक्त परिवार का समीकरण बिगड़ता ही जा रहा है। अब जहाँ अपनी ही औलाद स्वयं के माँ-बाप की चिंता नहीं कर रही है वहाँ भाई या अन्य रिश्तों की बात करना बेमानी लगता है। फिर भी एकांत श्रीवास्तव ने छिन्न-भिन्न होते हुए संयुक्त परिवार के तार को 'पाँचवें की याद' कविता में जोड़ने का प्रयास किया है। इसमें उन्होंने परिवार प्रेम का संवेदनात्मक दृश्य उपस्थित किया है।

बहुत शोर करती/पाँच भाई-बहनों की यह मण्डली/
जब एक साथ होती
घर में स्मृतियों की जो प्रदीर्घ परम्परा है/
उसमें हर जगह मौजूद है पाँचवाँ
माँ आज भी रसोई में काम करती हुई/
साड़ी के पल्लू से पोंछती रहती है आँखें
बहनें बात करती हुई सहसा हो जाती हैं चुप/
भाई आज भी गलती से पुकार लेते हैं उसका नाम
इंद्रधनुष है अब पाँचवाँ/जो कभी-कभी बारिश में/
धूप के कैमरे से दिखाई देता है/
रंगमंच पर हम सब खड़े हैं हतप्रभ/
अपना-अपना संवाद भूलकर/पाँचवें के इंतजार में
मगर पाँचवाँ है एक ऐसा नायक/
जो अपने कंधों पर ढोता है सम्पूर्ण कथा-सार
पर किसी दृश्य में जो सामने नहीं आता।[२५]

अंत में 'ऋतुएँ आती हैं' उत्तर खण्ड की 'कन्हार' शीर्षक नामक लम्बी कविता में कवि ने छत्तीसगढ़ के आँचलिक जीवन का जीवंत एवं सटीक चित्र खींचा है। एकांत श्रीवास्तव ने छत्तीसगढ़ में बदलते हुए मौसम और ऋतुओं के माध्यम से वहाँ के परिवेश, वातावरण, तीज-त्यौहार, लोक-जीवन, किसान एवं चरागाही संस्कृति आदि का सुन्दर दृश्य उपस्थित किया है। इसके साथ ही आधुनिकता के प्रभाव से तबाह होती हुई गाँव की जिन्दगी का यह दृश्य द्रष्टव्य है।

"गाँव के किसान/शहर की मिलों और फैक्ट्रियों में मजूर हुए/गाँव की बहू-बेटियाँ/शहर जाकर चौका-बर्तन करने वाली/ नौकरानियाँ हुईं/गाँव के नौजवान पढ़ लिखकर न किसान बन सके न कर्मचारी/एक अधकचरी-सी संस्कृति में फँसकर/फूलती हुई उनकी साँस/जमीन, जाति-धरम के झगड़े हुए/थानों और कोर्ट कचहरियों में खो गया/गाँव-घर का सुकून।"[२६]

नामवर सिंह पुस्तक के 'ब्लर्ब' पर लिखते हैं - "'अन्न हैं मेरे शब्द' से अपनी काव्य-यात्रा प्रारम्भ करने वाले एकान्त आज भी विश्वास करते हैं कि 'जहाँ कोई नहीं रहता/वहाँ शब्द रहते हैं।' आज जब चारों ओर से 'शब्द पर हमला' हो रहा है, एकान्त उन थोड़े से कवियों में हैं जो 'शब्द' को अपनी कविताओं से एक नया अर्थ दे रहे हैं।"

संदर्भ सूची -

१. एकांत श्रीवास्तव : मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद (काव्य संग्रह), पृ.४४
२. विजय बहादुर सिंह : संपा. वागर्थ, अंक १६२, जन. २००६, पृ.७८
३. एकांत श्रीवास्तव : अन्न हैं मेरे शब्द (काव्य संग्रह), पृ.११
४. मैथिलीशरण गुप्त : साकेत, पृ.२२५
५. एकांत श्रीवास्तव : अन्न हैं मेरे शब्द, पृ.१३
६. विजय बहादुर सिंह : संपा. वागर्थ, अंक १६२, जनवरी २००६, पृ.७६
७,८,९,१०-एकांत श्रीवास्तव : अन्न हैं मेरे शब्द, पृ.२३, ४४, ५३, ६३
११. नंदकिशोर नवल एवं संजय शांडिल्य : संपा. संधि-बेला, पृ.७६
१२. एकांत श्रीवास्तव : अन्न हैं मेरे शब्द, पृ.१०२
१३,१४,१५ - एकांत श्रीवास्तव : मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद (काव्य संग्रह), पृ.१४,१५,६६
१६,१७ - परमानंद श्रीवास्तव : संपा. आलोचना, जन-मार्च २००६, पृ.१०४-१०५
१८,१९,२० - एकांत श्रीवास्तव : मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद, पृ. २३, ६४, ४१
२१. परमानन्द श्रीवास्तव : संपा. आलोचना, जन-मार्च २००६, पृ.१०४
२२. एकांत श्रीवास्तव : बीज से फूल तक (काव्य संग्रह), पृ. २०
२३. परमानंद श्रीवास्तव : कविता का उत्तर जीवन, पृ.१७१
२४,२५,२६ - एकांत श्रीवास्तव : बीज से फूल तक, पृ. १०२, ११६, १३०